वैदहि ओखद जाणै': मीरां के काव्य की औपनिवेशिक पढ़त के विरुद्ध

यवनिका तिवारी

'वैदहि ओखद जाणै (मीरां और पश्चिमी ज्ञान-मीमांसा)' भारतीय साहित्य, संस्कृति और इतिहास की औपनिवेशिक या प्राच्यवादी निर्मितियों के समानांतर या लगभग विरुद्ध एक 'प्रत्याख्यान' रचती है। यह 'प्रख्यान' महज सर्वस्व नकार की भावना से प्रेरित नहीं है। प्रत्याख्यान माने उत्तर औपनिवेशिक औजारों से औपनिवेशिक ज्ञानकांड को चुनौती। प्रत्याख्यान माने प्राच्यवादी इतिहास के समक्ष एक वैकल्पिक इतिहास का पुनर्लेखन। प्रत्याख्यान माने औपनिवेशिक गिरफ्त से इतिहास और साहित्य का उद्धार। आलोचक माधव हाड़ा की यह पुस्तक पश्चिमी आलोचना की मौजूदा फॉर्मूलाबद्ध पद्धति की सीमाएं दिखाते हुए अन्वेष्य विषय मीरां को उनकी जैविक पारिस्थितिकी में स्थित करती है। पुस्तक का शीर्षक कई अर्थों में पुस्तक के रचनात्मक मानियों को मुखर करता है। 'को विरहिणी को दुख जाणे ?/जा घर विरहा सोई लखिहँ, कै/हरिजन मानै रोगी अंतर वैद वसत है, वैदहि ओखद जाणै।' मीरां के इसी पद से शीर्षक का चयन किया गया है। उद्धरित पंक्तियों की अंतिम पंक्ति में तीसरा अर्थ भी विन्यस्त है जो विदेशी आस्था पर आधारित आलोचना पद्धति पर एक टिप्पणी है। अपने वृहत्तर संदर्भ में यह पंक्ति यह अर्थ भी देने लगती है कि

जिस समाज में रोग है वहीं उसका वैद्य भी है जो रोग की प्रकृति को पहचानता है और उसी के अनुकूल औषधि जानता है। आलोचक यहाँ लगभग उसी व़ैद्य की भूमिका में है जो मध्यकालीन भक्ति साहित्य के प्रतिकूल पश्चिमी 'खोजी' दृष्टि को बर्खास्त करते हैं तथा लोकसम्मत बहुवचनवादी आलोचना पद्धति विकसित करता है। आलोचक माधव हाड़ा मध्यकालीन भक्ति साहित्य (मीरां के विशेष संदर्भ में) की पश्चिमी पढ़त और अपव्याख्या के पीछे उनकी अनावश्यक तथ्यधर्मिता तथा गैरवाजिब सारांशीकरण और सरलीकरण को दोषी मानते हैं जो भारतीय मानस के लिए सर्वथा प्रतिकूल है। उनका सारा बल इस बात पर भी है कि आलोचकों के 'लोकेशन' के कारण मीरां के काव्य की व्याख्या प्रभावित हुई है। मीरां के लगभग सारे प्रारम्भिक आलोचकों को प्राच्यवादी भूमि पर 'लोकेट' किया जा सकता है जिन्होंने मीरां को समझा या समझाया कम है, गढ़ा अधिक है।

पहला अध्याय-'औपनिवेशिक निर्मिति'-मीरां की ऐसी साजिशी गढ़न को सामने लाता है जो प्राच्यवादी और मर्दवादी ताकतों के गठजोड़ से निर्मित हुआ है। इस अध्याय के केन्द्र में जेम्स टॉड और उनकी परवर्ती तोतारटंत परम्परा है जिन्होंने मिलकर मीरां को महज रहस्यवादी और रूमानी संत-भक्त और कवयित्री के रूप में स्थापित किया तथा मीरां की 'स्त्री' को कुन्द करके पेश किया। टॉड ने भले ही मीरां के रहस्यवादी और रूमानी स्वरूप का प्रतिमानीकरण कर दिया फिर भी इस छवि में मीरां की जैविक उपस्थिति लगभग नहीं है। आलोचक ने टॉड की ऐसी निर्मिति के पीछे उसके विचारधारात्मक फायदों और एजेंडों पर विस्तार से लिखा है। उन्होंने अमर्त्य सेन के हवाले से तीन विश्लेषण पद्धतियां बताई हैं। (विदेश प्रेमी, दंडाधिकारी और संग्रहाध्यक्षीय) और यह भी प्रमाणित किया है कि टॉड की विश्लेषण पद्धति सर्वथा निष्पक्ष न होकर उन तीनों विधियों से प्रभावित थी। प्राच्यवादी ताकतें इसी तरह काम करती हैं। वे पूर्व (ओरिएंट) को इस तरह गढ़ती हैं कि वह असभ्य, शिकस्ता और इतिहास विहीन है तथा उसे यूरोपीय उद्धारकर्ता की सख्त जरूरत भी है। भारतीय इतिहास या साहित्य के संदर्भ में तमाम प्राच्यवादी गढ़न प्रथमतः और अन्ततः ज्ञान की राजनीति से निर्मित हैं। अतः मीरां का काव्य भी दोहरे तिहरे हाशियाकरण का शिकार है क्योंकि टॉड की मीरां विषयक निर्मिति औपनिवेशिक, राजपूतों/सामन्तों और पुरुषों के हितों को केन्द्र में रखकर गढ़ी गयी है। यही कारण है कि मीरां की गैर भौतिक रहस्यवादी और रूमानी छवि बनायी गई। आलोचक को यह बात अधिक परेशान करती है कि टॉड के बाद के इतिहास लेखन की परम्परा मौलिक और स्वतंत्र न होकर टॉड की छाया में विकसित एक तोतारटंत पद्धति पर थी। इसके अंतर्गत वे श्यामलदास, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा और मुंशी देवीप्रसाद का उल्लेख करते हैं। इन 'नेटिव' इतिहासकारों ने वही लिखा जो प्राच्यवादी ताकतों द्वारा थोपा गया था। इन (पुरुष) इतिहासकारों में एक और बात सामान्य है, वह यह कि इन्होंने मीरां के 'पॉलिटिकल' पक्ष को-जहाँ एक ही साथ राजसत्ता और पितृसत्ता का घनघोर स्तर पर विरोध है-ढाँपने-मूँदने की कोशिश की है। ऐसे में आलोचक के तर्कों से सोलहों आने सहमत हुआ जा सकता है कि मीरां की छवि को बिगाड़ने में औपनिवेशिक सत्तातांत्रिक और पुरुषतांत्रिक हित निहित हैं।

आलोचक मीरां के तमाम इतिहासकारों की तुलना में हरमन गुस्ताव गोएत्ज के तर्कों में अधिक सममिति देखते हैं। इनकी कई स्थापनाएँ मौलिक तो हैं पर यूरोकेंद्रित होने के कारण उनमें द्वैध भी है। आलोचक ने रवीन्द्रनाथ ठाकुर को संदर्भित करते हुए यूरोपीय 'विभाजित' चेतना की आलोचना की है तथा इस द्वैतवादी पद्धति को भारतीय मानस के प्रतिकूल सिद्ध किया है। गोएत्ज ने मीरां की प्रचलित छवि को कुछ हद तक बदला लेकिन उसकी रहस्यवादी और पवित्रात्मा संत-भक्त वाली छवि सारतः नहीं बदली। आलोचक ने इस ओर भी ध्यान दिलाया कि मध्यकालीन इतिहास किस तरह विदेशी प्रभुत्व और ज्ञान की राजनीति से संचालित था जिसके तहत देशभाषा स्रोत और

जनश्रुतियाँ प्रामाणिक-ऐतिहासिक वृत्तों से बाहर रखी गयीं। वहाँ आलोचक ने प्रकारान्तर से उसी प्राच्यवादी रणनीति की ओर इशारा किया है जिसका प्रमुख उद्देश्य देशभाषा स्रोतोंं को अमुख्य, अविश्वसनीय, अवांतर और मनगढंत माना है। माधव हाड़ा की आलोचकीय समझ मीरां के काव्य के अर्थ-पार्श्वों केा खोलती है, जैसे "मीरां की कविता में जिस राणा से तनावपूर्ण सम्बन्ध और नाराजगी का बार-बार उल्लेख आता है, वह भोजराज नहीं है... सही तो यह है कि 'राणा' संज्ञा उसने अपने सत्तारूढ़ देवर विक्रमादित्य और रतनसिंह के लिए प्रयुक्त की है'' जैसी स्थापनाएँ मीरां के पाठ को नया स्रष्ट्यर्थ प्रदान करती हैं, नई सम्भावनाएँ जोड़ती हैं और उसकी अनेक आयामिता को प्रकाश में लाती हैं।

यूरोकेन्द्रित क्लासिकल इतिहास लेखन की प्रविधि कई मानियों में अतीत की 'अतीतता' को भ्रष्ट करती है। श्रुत और स्मृत पर आधारित भारतीय साहित्य भी इसका शिकार है। आलोचक के अनुसार मीरां का काव्य और स्वयं मीरां इसके अपवाद नहीं हैं। उन्होंने फ्रांसिस टैफ्ट को कटघरे में खड़ा किया है और ईसाई पद्धति पर आधारित उनके इतिहास बोध को प्रश्नांकित भी किया है। पश्चिमी पारम्परिक इतिहासशास्त्रीय दृष्टि जनश्रुतियों, लोककथाओं, आख्यानों, लोकस्मृतियों इत्यादि को अनैतिहासिक मानती हैं। यों भी प्राच्यवादियों के मत में पूर्व (ओरिएंट) इतिहासविहीन है और क्रमिकता तथा तथ्यों के तैथिक आयामों के प्रति असावधान है। इसी के तहत फ्रांसिस टैफ्ट ने भी मीरां का मूल्यांकन उनके दिक्गत और कालिक परिप्रेक्ष्य से काटकर पश्चिमी मानकों के अनुसार किया है। आलोचक ने यहाँ भी रवीन्द्रनाथ ठाकुर के हवाले से पश्चिमी इतिबोध-बोध और उसके एकरैखिक-एकवचनवादी आग्रहों को भारतीय संस्कृति के लिए बेमेल और बेमानी सिद्ध किया है। माधव हाड़ा ने प्रकारान्तर से नव्य इतिहासशास्त्र की ही नींव रखी है जहाँ केवल प्रामाणिक दस्तावेज ही नहीं तमाम जनश्रुतियाँ, लोककथाएँ इत्यादि भी इतिहास का अंग मानी जाती हैं।

इसी क्रम में आलोचक ने जॉन स्ट्रैटन हौली की भी उसके पश्चिमी पूर्वाग्रहों के कारण तीव्र आलोचना की है। हौली ने मीरां के काव्य में व्याप्त विरह के आधार पर भारतीय संस्कृति को लैंगिकता की दृष्टि से विषम माना है। हौली ने पश्चिम से आनीत-आयातित संस्कारों के आधार पर भारतीय परम्परा में प्रेम और विरह को व्याधि मान लिया है। इसके विरोध में आलोचक ने भारतीय परम्परा प्रणीत कई विरह काव्यों का नामोल्लेख किया है जिससे यह प्रमाणित होता है कि विरह केवल स्त्री के अधिकार क्षेत्र में ही नहीं आता बल्कि पुरुष भी समान रूप से उसके भोक्ता हैं। इतना ही नहीं उन्होंने हौली की भ्रामक स्थापनाओं को खारिज करने के लिए मीरां को उनकी कालिक परिस्थितियों के बीच रखकर कई अकाट्य तर्क दिए हैं। राजस्थान और राजपूतों के स्त्री विषयक विधानों का भी सूक्ष्म ब्योरा दिया गया है, जिससे भारतीय समाज संबंधी पश्चिमी दुराग्रह अपने आप निरस्त हो जाते हैं। 'विरह का लैंगीकरण' अध्याय में आलोचक ने मीरां के दो टूकपन को, जिसका उल्लेख अन्य (पुरुष, प्राच्यवादी) आलोचकों ने केवल दबी जुबान से किया है, उभारा और सराहा है। उन्होंने उनके काव्य कीे वस्तु और वास्तु के आधार पर उनके समकालीनों से मीरां अलहदगी भी दिखाई हैं। इस अध्याय में इस बात पर जोर दिया गया है कि भक्तिकाल में ब्रह्म के सत्य और जगत् के मिथ्यात्व की चढ़त के बीच रहकर भी मीरां का काव्य वस्तुजगत् से विरत नहीं है बल्कि उसमें मीरां के सांसारिक-आवयविक अनुभव भी कैद हैं। हौली की मीरां विरह की व्याधि से ग्रस्त है और इसके उलट आलोचक माधव हाड़ा की मीरां ऐंद्रिक दमन को नकारने वाली, व्यवस्था से खुलेआम विद्रोह करने वाली, अन्य संत भक्तों के बरअक्स वैयक्तिक पहचान के संबंध में मुखर रहने वाली स्त्री है।

प्राच्यवादियों का 'ऑथेंटिक' के प्रति अत्यधिक झुकाव मध्यकालीन साहित्य के लिए निर्णायक सिद्ध हुआ है। विदेशी और उनके अनुवर्ती आलोचकों की मीरां के काव्य को प्रक्षिप्त साबित करने की हुड़क ने मीरा के पदों को संख्यावाची स्तर पर तो सीमित किया ही साथ ही उनके व्यापक प्रभाव को कमतर करके केवल घरेलू स्त्रियों तक भी सीमित कर दिया। आलोचक माधव हाड़ा ने अपनी प्रत्यालोचना से सिद्ध किया है कि मीरां की यशःकाया किसी सम्प्रदाय विशेष या विदेशी उद्धारकर्ता (!) की मोहताज नहीं है। आर्ष, बौद्ध और जैन ग्रंथों और उनकी श्रुत स्मृत परम्परा का ब्योरा देते हुए उन्होंने दिखाया है कि भारतीय साहित्य दस्तावेजीकरण के विरुद्ध श्रुत और स्मृत की वाचिक परम्परा से निर्मित है तथा मध्यकालीन साहित्य का स्वभाव भी यही है। 'मौखिक बनाम पांडुलिपि' शीर्षक अध्याय में मीरां से संबंधित कई महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते हैं जैसे कि "मीरां की रचनाएँ भी 'हरजस' के रूप में पश्चिमी राजस्थान की मेघवाल जाति के लोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्मरण रखकर गा रहे हैं।'' इस बयान से मीरां के काव्य पर लगे आक्षेप अपने आप निरस्त हो जाते हैं कि यह घरेलू स्त्रियों तक सीमित है और यह भी कि उपलब्ध अधिकतर पद प्रक्षिप्त हैं।

पश्चिमी मनीषा साहित्य-संस्कृति में एकरूपता देखने की आग्रही है। कहना न होगा कि मीरां के काव्य की विविधवर्णी प्रवृत्ति भी इसकी चपेट में आती है। हौली समेत अन्य विद्वानों ने मीरां के काव्य में या तो केवल प्रेम और विरह देखना चाहा या फिर उसके केवल आमुष्मिक 'कॉन्टेंट' को ही संज्ञान में लिया है। आलोचक माधव हाड़ा ने 'वैदहि ओखद जाणै' में आलोचना पद्धति की इन रिक्तियों को भरने का काम किया है और मीरां के काव्य की सभी रंगतों (जिसमें प्रेम, विरह, विद्रोह, भक्ति, काव्यात्मकता आदि शामिल हैं) को बहाल किया है। यहाँ कहना यह भी है कि रिक्तियाँ केवल औपनिवेशिक/प्राच्यवादी आलोचना दृष्टि ने ही पैदा नहीं की बल्कि कुछ टूटन और दरकन स्वदेशी आलोचना पद्धति में भी है। आलोचक का यह कहना तर्कसम्मत है कि "रामचन्द्र शुक्ल के वैदुष्य के कारण मीरां की कविता पर माधुर्य भाव का यह टैग हिन्दी में रूढ़ि बन गया। उनकी रचनाओं का अनुसंधान और आलोचना करने वाले विद्वानों ने कृष्णलीला और माधुर्यभाव से इतर उसकी रचनाओं को अप्रामाणिक ठहरा दिया।" नतीजतन यही 'टैग' आचार्य शुक्ल की उत्तरवर्ती आलोचना पद्धति में टेक की तरह दोहराया गया। मीरां के काव्य की भाषाई विविधता भी उनके काव्य के अध्ययन की समस्या बनी। यह पश्चिमी भेद-बुद्धि और औपनिवेशिक समझ ही जिसके कारण मीरां के काव्य में गुजराती और ब्रज के शब्द समूहों का होना अप्रामाणिक मान लिया जाता है। आलोचक ने तमाम साक्ष्यों के माध्यम से इसे असंगत करार दिया है तथा मीरां के पदों की मूल भाषा उत्तर भारत में प्रयुक्त अपभ्रंश की अंतिम अवस्था में विकसित देशभाषा को बताया है।

"प्रस्तुत किताब मीरां सम्बन्धी पश्चिमी मनीषा की कुछ धारणाओं का प्रतिवाद या प्रत्याख्यान है"-भूमिका से उद्धरित यह अंश 'वैदहि ओखद जाणै (मीरां और पश्चिमी ज्ञान-मीमांसा)' का बीज वाक्य है। यह पुस्तक इस मानी में अत्यन्त विशिष्ट है कि यह आलोचना के क्षेत्र में नई तरह से प्रतिवाद की भाषावली विकसित करती है। आलोचकों के औपनिवेशिक संस्कार ने मीरां की छवि और उनके काव्य की कमनीयता को जिस तरह बिगाड़ा, यह पुस्तक उसके विरुद्ध एक मुहिम है। आलोचक माधव हाड़ा मीरां के पक्ष में उन सभी तर्कों पर कायम रहते हैं जिनको प्रामाणिक मानने से औपनिवेशिक ज्ञानकांड बरज रहा होता है। 'वैदहि ओखद जाणै' उस सार्थक प्रयास का नाम है जिसके तहत औपनिवेशिकता को पोसनेवाले आलोचना संस्कारों का देशज मूल्यानुभूति मे ें कायाकल्प होता है।

समीक्षित कृति: वैदहि ओखद जाणै: मीरां और पश्चिमी ज्ञान-मीमांसा

लेखक: माधव हाड़ा/राजकमल प्रकाशन, 2023 /मूल्य: 250/-